सीरते रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से रहनुमाई

(नफ़रत के माहौल में)

लेखक :
डॉ० मुहीउददीन ग़ाज़ी

अनुवाद –
डॉ० रफ़ीक़ अहमद

सीरते रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से रहनुमाई

(नफ़रत के माहौल में)

लेखक :

डॉ० मुहीउददीन ग़ाज़ी

अनुवाद –

डॉ० रफ़ीक़ अहमद

किताब का नाम	:	सीरते रसूल सल्ल0 से रहनुमाई
लेखक	:	डा० मुहीउद्दीन ग़ाज़ी
अनुवाद	:	डा० रफ़ीक़ अहमद M.: 9451767474
हिन्दी एडीशन	:	2022
प्रतियाँ	:	1000
पृष्ठ	:	24
कम्पोज़िंग	:	शाहनवाज़
प्रिन्टर्स	:	रहमान प्रिन्टर्स एण्ड स्टेशनर्स आबूनगर–फ़तेहपुर
सहयोग राशि	:	**10/-**

प्रकाशक

अल्फाबेट पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स

इलाहाबाद

●

मिलने का पता :

असद बुक डिपो

11-C, **याकूतगंज, नखासकोना-इलाहाबाद**

Mob. : 9307408918

بِسۡمِ ٱللَّهِ ٱلرَّحۡمَٰنِ ٱلرَّحِيمِ

अल्लाह के रसूल सल्ल0 की सीरत में मुसलमानों के लिये बहुत ज़्यादा नसीहतें हैं। सीरत से मुराद सिर्फ आप सल्ल0 की ज़िन्दगी ही नहीं है बल्कि वह पूरा ज़माना है जिस पर आप सल्ल0 असर अन्दाज़ हुए, मक्का और मदीना फिर पूरे अरब में जो हालात पेश आऐ और उन हालात में अल्लाह के रसूल सल्ल0 और आप के सहाबा ने जो रवैया इख़्तियार किया, उन सब में रहनुमाई का बड़ा सामान है।

मक्की दौर में अल्लाह के रसूल सल्ल0 की जमात दुनयवी लिहाज़ से कमज़ोर और तादाद के लिहाज़ से कमतर थी। समाज पूरी तरह से मिला जुला था। ताक़त और अकसरियत (बहुसंख्यक) पर आधारित तबक़ा अपने मज़हब और नजरिये को अकलियत (अल्पसंख्यक) पर ताक़त के बल पर थोपना चाहता था। ऐसे संगीन हालात में अल्लाह के रसूल सल्ल0 ने क्या हिकमते अमली अपनाई? सहाबा एकराम रज़ि0 को किस रवैये की तालीम दी? हालात को मुनासिब रूख़ पर रखने के लिये क्या क़दम उठाये? इन सवालों के जवाबात ज़रूर तलाश करने चाहिये।

आज भी दुनिया के वह तमाम इलाक़े, जहाँ मुसलमान तादाद में कम और दुनयवी संसाधनों के लिहाज़ से कमज़ोर हैं, मक्का के हालात से बहुत कुछ सीख सकते हैं। आगे हम कुछ पहलूओं पर रोशनी डालेंगे।

मिशन पर निगाह जमाये रखें

अल्लाह के रसूल सल्ल0 और आप के सहाबा रज़ि0 की मिशन से वाबस्तगी और उसके लिये दीवानगी आला दर्जे की थी और हमेशा उसी तरह रही। रास्ता रोकने या बदलने वाली बहुत सी रुकावटें आती रहीं, लेकिन मिशन पर निगाहें जमी रहीं और क़दम उसी की तरफ बढ़ते रहे। धमकियों और सख़्तियों ने रास्ता बन्द करने की कोशिश की, लालच और पेशकशों ने रास्ता बदलने की कोशिश की, लेकिन वह सारी कोशिशें नाकाम हुईं।

अल्लाह के रसूल सल्ल0 का समाजी बायकाट किया गया, आप सल्ल0 उसके नुक़सानात से अपने साथियों को बचाने की तदबीरें तो कीं लेकिन उसे अपनी कोशिशों का असल मक़सद नहीं बनने दिया।

लोग आपको और आपकी दावत को बदनाम करने के लिये तरह तरह के हथकंडे इस्तेमाल करते, आप ज़रूरी हद तक उसका जवाब भी देते, लेकिन उसमें उलझ कर आप सल्ल0 ने अपनी कोशिशों को बिखरने नहीं दिया। आप पर ईमान लाने वाले ग़ुलामों और लौन्डियों को बुरी तरह सताया जाता, आप सल्ल0 ने हज़रत अबू बक्र रज़ि0 और दूसरे ख़ुशहाल सहाबा के ज़रिये उनको आज़ाद कराने और हिफ़ाज़त का इन्तेज़ाम तो किया लेकिन अपनी सारी तवज्जो अपने मिशन पर केन्द्रित रखी।

उसका नतीजा यह निकला कि दूसरे वक़्ती समस्यायें आतीं और हल होती रहीं, लेकिन मिशन की तरफ पेश क़दमी जारी रही। इसके नतीजे में काफ़िला आगे बढ़ता गया और उससे सम्बन्धित लोगों की क़ूव्वत में इज़ाफा होता गया।

उसका नतीजा यह निकला कि वक़्ती समस्याओं की शिद्दत भी धीरे धीरे कम होती गई। मिशन पर केन्द्रित होने के नतीजे में हब्शा के बादशाह की हिमायत हासिल हुई, हज़रत हमज़ा रज़ि0 और हज़रत उमर रज़ि0 जैसे बाअसर लोग शामिल हुऐ और मदीने में औस और खज़रज के सरदारों ने इस दीन को सीने से लगाया। वक़्ती मसाएल में उलझ जाने की सूरत में यह क़ूव्वत हासिल न हो पाती। मिशन पर जमी निगाह ने दीनी सतह को बुलन्द किया, अख़लाक़ी मज़बूती में इज़ाफा किया, नए–नए मैदान खोले और दारे अरक़म में जमा होने वालों का दो दहाइयों के खत्म होते होते तमाम अहले अरब ने अपनी क़ियादत व सियादत सौंप दी।

नमाज़ और सब्र से मदद हासिल करें

सीरते रसूल सल्ल0 की किताबों में मक्की दौर की जितनी तसवीरें मिलती हैं उनमें सबसे ज़्यादा तसवीरें नमाज़ और सब्र की हैं।

मक्का में इस्लाम का आग़ाज़ नमाज़ से हुआ और इस्लामी दावत का आग़ाज़ सब्र से हुआ। इस्लाम के आगाज़ से ही अल्लाह के रसूल सल्ल0 और बीबी ख़दीजा रज़ि0 साथ नमाज़ पढ़ा करते थे। फिर जैसे जैसे हज़रात सहाबा इस्लाम में दाख़िल होते गये मुख़्तलिफ़ अनजान मुक़ामात पर नमाज़ का एहतेमाम करने लगे।

फिर जैसे जैसे इस्लाम की दावत फेलने की खबर मक्का के मुशरिकों को होती गई, उनकी तरफ से ज़ुल्म और जवाब में मुसलमानों की तरफ से सब्र का सिलसिला शुरू हो गया और आख़िर वक़्त तक जारी रहा। ज़ुल्म जितना सख़्त था सब्र भी उतना ही फौलादी था।

नमाज़ इस बात की अलामत है कि अल्लाह से मोमिन का ताल्लुक़ बहुत मज़बूत है। और सब्र इस बात की अलामत है कि मोमिन का अपने दीन और मिशन से रिश्ता बहुत गहरा है।

अल्लाह से मज़बूत ताल्लुक हो तो तवक्कल (भरोसा) की सिफ़त पैदा होती है। दीन से मज़बूत ताल्लुक हो तो सब्र की सिफ़त पैदा होती है। सब्र व तवक्कल से जो क़ौम लैस हो जाती है उसे कोई पराजित नहीं कर सकता। सब्र व तवक्कल होता है तो आदमी बहुत से भयानक खतरात से सुरक्षित रहता है, मसलन वह ग़मगीन और मायूस नहीं होता, घबराहट और बेचैनी का शिकार नहीं होता, उत्तेजना और जज़्बातियत के जाल में नहीं फंसता, अपने मोक़िफ़ से पीछे नहीं हटता, अपना रास्ता नहीं बदलता, मन्ज़िल पर हमेशा निगाह रखता है और उसे अपनी निगाहों से ओझल नहीं होने देता।

सीरते रसूल सल्ल0 से हमें सबक़ मिलता हैं कि मर्दे मोमिन मन्ज़िल तक पहुँचने के लिये तेज़ रफ्तार होता है, लेकिन जल्दबाज़ी नहीं करता। वह अपनी बात रखता है, दूसरों की बात सुनता है, लेकिन दूसरों की बातों में उलझता नहीं है। हैरत की बात है कि तेरह साल की लम्बी और सख़्त आज़माइशों के बावजूद अल्लाह के रसूल सल्ल0 ने अपने विरोधियों के लिये अज़ाब की दुआ की न क़ुनूते नाज़ला पढ़ी।

कितनी अजीब बात है कि ज़्यादतियों के मुक़ाबले में आप सल्ल0 ने जंग भी नहीं छेड़ी और दीन के मामले में किसी समझौते को भी कुबूल नहीं किया। यह सब कुछ नमाज़ और सब्र की बदौलत हुआ।

मुसलमानों की दीनी तरबियत का इन्तेज़ाम करें

मुसलमान चाहे कितने ही ज़्यादा खतरात और समस्याओं के शिकार हों, दीनी तालीम व तरबियत उनकी सबसे बड़ी ज़रूरत है। चुनाँचे अल्लाह के रसूल सल्ल0 ने मक्का शहर में पहले दिन से ही दीनी तालीम व तरबियत को पहली प्राथमिकता दी।

एक तरफ तो हिकमते अमली के तकाज़े के तहत आप सल्ल0 ने खामोशी से बिला एलान व प्रचार के दावत का तरीक़ा इख़्तियार किया था, दूसरी तरफ़ मुसलमानों की बुनयादी ज़रूरत को पूरा करने के लिये आपने हज़रत अरक़म रज़ि0 के कुशादा मकान में तालीमगाह क़ायम की हुई थी, जहाँ मुसलमान, लोगों की निगाहों से बच कर जमा होते और अल्लाह के रसूल सल्ल0 से दीन की तालीम हासिल करते।

इसके अलावा जो लोग दारे–अरक़म से तालीम हासिल कर लेते, उन्हें मोअल्लिम (टीचर) बना कर मुख्तलिफ घरों में छोटे छोटे ग्रुप की सूरत में तालीम देने के लिये भेजा जाता था। चुनाँचे हज़रत फ़ातिमा बिन्त खत्ताब (हज़रत उमर की बहन) और उनके शौहर हज़रत सईद बिन ज़ैद (हज़रत उमर के चचाज़ाद भाई) और उनके साथ एक और साहब : हज़रत नईम बिन अब्दुल्लाह, इन तीनों के लिये अल्लाह के रसूल सल्ल0 ने हज़रत ख़ब्बाब बिन अरत को उस्ताद बनाया था। वह हज़रत सईद रज़ि0 के घर आकर उनको कुरान की तालीम देते थे।

मुसलमान जहाँ अकलियत (अल्पसंख्यक) में होते हैं दुनयवी लिहाज़ से कमज़ोर होते हैं और दुनयवी और तादाद के ऐतबार से कहीं ज़्यादा ताक़तवर मज़हबी और तहज़ीबी गिरोहों से

घिरे हुऐ होते हैं वहाँ उनके जान व माल से ज़्यादा मज़हबी और तहज़ीबी पहचान को शदीद खतरात लगे रहते हैं। कभी अर्न्तधार्मिक शादियों को मसला खड़ा हो सकता है, कभी इर्तिदाद (धर्म त्याग) का फितना सर उठा सकता है, कभी शिर्क व कुफ्र पर आधारित सोच रिवाज पा सकते हैं। ऐसे माहौल में उनको दीनी तालीम व तरबीयत की सख्त ज़रूरत होती है।

मायूसी से दूर रहें

अल्लाह के रसूल सल्ल0 की हिदायत पर मक्का से सहाबा का एक गिरोह हब्शा के लिये रवाना हुआ। यह वह वक्त था जब मक्का में मुख़ालफ़त हद से ज़्यादा बढ़ी हुई थी और वहाँ मुसलमानों का जीना दूभर कर दिया गया था। हब्शा जाने वाले गिरोह में हज़रत आमिर बिन रबीआ रज़ि0 और उनकी बीवी हज़रत लैला रज़ि0 भी थीं। सफर की तैयारी के दौरान आमिर किसी ज़रूरत से बाहर गये हुऐ थे और उनकी बीवी लैला घर में थीं, इतने में उमर बिन ख़त्ताब उधर आ निकले उस वक़्त वह ईमान नहीं लाए थे और मुसलमानों पर जुल्म ढाने में आगे–आगे रहते थे। उन्होंने सफर की तैयारी करते हुऐ देखा तो पूछा अब्दुल्लाह की माँ! क्या कहीं कूच करने का इरादा है? उन्होंने कहा हाँ, तुम लोगों ने हमपर बहुत क़हर ढाया और बहुत तकलीफें दी हैं, अल्लाह की क़सम अब हम अल्लाह की ज़मीन में कहीं निकल जाऐंगे। हमें उम्मीद है कि अल्लाह हमारे लिये रास्ता निकालेगा। उस पर उमर ने कहा अल्लाह तुम्हारे साथ रहे। लैला रज़ि0 कहती हैं कि– उस वक्त मैंने उमर के चेहरे पर ऐसा प्रभाव देखा जो पहले कभी नहीं देखा था। वह चले गये, साफ ज़ाहिर था कि हमें जाता देख कर उनके दिल को दुख हुआ है। कुछ देर के बाद जब

आमिर घर वापिस आऐ तो मैंने कहा अब्दुल्लाह के अब्बा! काश आप देखते कि उमर हमारे जाने से कितना उदास हैं और उनका दिल कैसा पिघल रहा है, आमिर ने कहा तुम्हें क्या लगता है? क्या तुम्हें उमर के हिदायत पाने की उम्मीद है? लैला ने कहा हाँ मुझे उम्मीद लग रही है। इस पर आमिर ने कहा : अल्लाह की कसम ऊँट या गधा तो मुसलमान हो सकता है, मगर उमर ईमान लाने वाला नहीं है (हाकिम व तिबरानी)

ऐसे हालात में जबकि ज़ुल्म व सितम हद से बढ़ा हुआ था और उसका एक नुमायाँ चेहरा उमर बिन खत्ताब थे, एक एहसास हज़रत आमिर बिन रबीया रज़ि0 का था जो मायूसी से भरा था, दूसरा एहसास उनकी बीवी हज़रत लैला का था जिसमें उम्मीद शामिल थी।

इन दोनों के अलावा एक मोक़िफ़ अल्लाह के रसूल सल्ल0 का था जिस में अल्लाह की नुसरत व मदद पर पूरा यकीन था। आप सल्ल0 दुआ फ़रमाते या अल्लाह! अबू जहेल या उमर बिन ख़त्ताब दोनों में से जो तुझे पसन्द हो उससे इस्लाम को कूव्वत अता फ़रमा। (तिरमिज़ी अहमद)

अल्लाह के रसूल सल्ल0 की दुआ कुबूल हुई और हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ि0 आप की रिसालत पर ईमान ले आऐ। वह इस्लाम लाने के बाद ज़िन्दगी भर दीन की कूव्वत व शान को बढ़ाने का काम करते रहे। हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ि0 कहते हैं जबसे उमर इस्लाम लाऐ हम ताक़तवर और कामयाब रहे।'' (बुख़ारी)

मालूम हुआ कि इस्लाम का सफर उम्मीद के दरख्त के साए में आगे बढ़ता है। जब ज़ुल्म व कहर के अंधेरे खतरनाक हद

तक बढ़े हुए हों तो भी कूव्वत व अज़मत के मुक़ाम पर पहुँचने की उम्मीद ताज़ा दम रहती है, यही नहीं बल्कि उसकी भी क़वी उम्मीद रहती है कि जो लोग अभी मुख़ालफ़त में आगे–आगे हैं, जिनके हाथ मुसलमानों के खून से रंगीन हैं, वह भी इस्लाम के पैग़ाम से प्रभावित होकर इस्लाम के आमंत्रक और ध्वाजावाहक बन जाऐं, जो इस्लाम के खिलाफ जंग कर रहे हैं उनकी कूव्वतें इस्लाम की मदद के लिये वक्फ हो जाऐं। अगर उमर हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि0 बन सकते हैं तो इस्लाम का बड़े से बड़ा दुश्मन इस्लाम का शैदाई साथी बन सकता है। जिसे यक़ीन न आऐ वह हज़रत उमर रज़ि0 की इस्लाम लाने से पहले वाली ज़िन्दगी का अध्ययन करे, फिर इस्लाम लाने के बाद वाली ज़िन्दगी को पढ़े।

अख़लाकी ताक़त अहम दिफ़ाई (Defensive) कूव्वत है, इसे बढ़ाते रहें

एक बार ऐसा हुआ कि मक्का वालों की हरकतों से तंग आकर हज़रत अबू बक्र सिद्दीक रज़ि0 हब्शा के लिये निकल पड़े। रास्ते में उनकी मुलाक़ात इब्ने दगुन्ना से हुई जो मुसलमान नहीं था। वह मक्का के बाअसर लोगों में से था। उसने पूछा आप किस इरादे से निकले हैं? हज़रत अबू बक्र रज़ि0 ने जवाब दिया तुम्हारी क़ौम ने मेरा जीना दूभर कर दिया है, अब मैं कहीं दूर जाकर अल्लाह की इबादत करूँगा। इस पर इब्ने दगुन्ना ने कहा– आप जैसे इन्सान को न निकाला जाएगा और न निकलने दिया जाएगा। आप तो गरीबों को खुशहाल बनाते हैं, रिश्ते जोड़ते हैं, बोझ उठाते हैं, मेहमान नवाज़ हैं और मुसीबतो में काम आते हैं। वापस चलिये, मैं आप को पनाह दूँगा, आप आज़ादी से अपने रब की इबादत करें। वह उन्हें अपने साथ वापस लाया और कुरैश के

सरदारों के बीच खड़े होकर एलान कर दिया कि अबू बक्र मेरी पनाह में रहेगें, वह इसी शहर में रहेगें। न उन्हें निकाला जाएगा, न निकलने दिया जाएगा।

मालूम हुआ कि आला अख़लाक़ी खूबियां बहुत बड़ी दिफाई कूव्वत होती हैं। अगर मुसलमान अक़लियत (Minority) में रहते हुए दुनयवी संसाधन, के लिहाज़ से बेहद कमज़ोर हों तो भी आला अख़लाक़ी खूबियों की बदौलत उन्हें समाज में क़ाबिले इज़्ज़त मुक़ाम मिलता है।

हमदर्दो की क़द्र करें, उनकी तादाद बढ़ाते रहें

जिस दौर में मक्का शहर मुसलमानों के लिये ज़ुल्म व सितम का निशाना बना हुआ था, उस वक़्त वहाँ ऐसे लोग भी थे जो मुसलमान तो नहीं थे लेकिन इन्सानी बुनियादों पर ज़ुल्म के मुख़ालिफ़ और मज़लूमों के हमदर्द थे। इसलिये वह मज़लूम मुसलमानों की मदद और हिफ़ाजत़ के लिये आगे रहते थे। आप तसव्वुर करें कि जब हज़रत अबू ज़र ग़िफारी रज़ि0 ने मुसलमान होने को एलान किया और मक्का के लोग उनपर टूट पड़े तो हज़रत अब्बास रज़ि0 उनके ऊपर जाकर लेट गये और उन्हें बचा लिया, हालाँकि उस वक़्त तक वह मुसलमान नहीं हुए थे।

जब कुरैश ने मुसलमानों को समाजी बायकाट किया और वह अल्लाह के रसूल सल्ल0 के साथ शेबे अबी तालिब में क़ैद हो गये तो इस बायकाट के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाने वाले लोग मुसलमान नहीं थे, मगर इन्सानी बुनियादों पर इस ज़ुल्म के खिलाफ उठे थे।

क़बीला बनू ख़ज़ाआ के लोग जब इस्लाम नहीं लाए थे उस वक्त भी वह अल्लाह के रसूल सल्ल0 के साथ खैर ख्वाही का मुख़लिसाना ताल्लुक रखते थे। उसकी एक मिसाल यह है कि जब

उकबा की बेटी उम्मे कुलसुम रज़ि0 छुप कर हिजरत के लिये तन्हा मक्का से मदीना के लिये निकलीं तो रास्ते में उस कबीले का एक आदमी मिला। उसने पूछा– किधर का इरादा है? उन्होंने बताया कि मैं अल्लाह के रसूल सल्ल0 के पास जाना चाहती हूँ लेकिन मुझे रास्ते मालूम नहीं है। उसने कहा मैं आपको मदीना पहुँचा दूँगा। वह एक ऊँट ले कर आया मुझे बिठाया और मुझे मदीना पहुँचा आया। हज़रत उम्मे कुलसुम कहती हैं : वह बेहतरीन इंसान था, अल्लाह उसे अच्छा बदला दे।

ग़र्ज़ यह समझना चाहिये कि अगर कहीं मुसलमान अकलियत (Minority) में हैं तो ज़रूरी नहीं कि वहाँ रहने वाली ग़ैर मुस्लिम अकसीरियत (Majority) पूरी की पूरी इस्लाम मुखालिफ हो। और यह भी ज़रूरी नहीं कि इस्लाम की मुखालफत करने वाले सभी लोग दुश्मनी की हद तक पहूँचे हुए हों।

इन्सानी आबादी में हमेशा इन्सानियत दोस्त इन्सानों की बड़ी तादाद रहती है। अगर किसी जगह मुसलमान अकलियत में हों, कमज़ोर हों और ज़ुल्म व सितम का निशाना बन रहे हों तो उनके बचाव और हिफ़ाज़त के लिये ऐसे इन्सानियत दोस्त लोगों की तलाश करनी चाहिये उनकी क़द्र करनी चाहिये और उनका हौसला बढ़ाना चाहिये, उनकी बहुत सी कोताहियों और कमियों को नज़र अन्दाज़ करते हुए उनकी कोशिशों का चाहे वह कितनी ही कम हों, एतेराफ़ करना चाहिये। ज़रूरी नहीं कि जो शख़्स इन्सानियत दोस्त होने का दावा करे वह हर मौक़े पर आप के साथ खड़ा रहे तो भी अगर वह आपे खिलाफ और कभी आपके साथ खड़ा हो तो भी उसके कभी कभी साथ खडे होने को क़ाबिले कद्र समझना चाहिये।

नए मौके तलाश करते रहें

मुस्लिम उम्मत आला मक़सद और नसबुलऐन रखती है। उसकी हैसियत दाई (आमंत्रक) गिरोह की है। उसका मुक़ाम व मिशन सिर्फ मिल जुल कर रहना नहीं है, बल्कि वह साथ ही अपने दीन की तरफ दावत देने वाली भी होती है। वह अमन पसन्द होते हुए भी बातिल से टकराती रहती है। जुल्म, बेहयाई, करप्शन, फ़िस्क़ व फ़िजूर और कुफ़्र व शिर्क के ख़िलाफ़ उसकी जंग जारी रहती है।

मुस्लिम उम्मत के लिये किसी घाटी में सिमट जाना जाएज़ नहीं है और न उसे यह शोभा देता है। अपने पैग़ाम को फैलाने के लिये नए नए रास्ते और मैदान तलाश करना उसके मिशन का हिस्सा है।

अल्लाह के रसूल सल्ल0 ने मक्का में रहते हुए अपनी दावत को सिर्फ मक्का वालों तक सीमित नहीं रखा। आपकी हिदायत पर कुछ लोग हब्शा पहुँचे, तो उन्होंने वहाँ दीन की दावत का काम किया।

अल्लाह के रसूल तायफ गऐ और वहाँ के क़बीलों के सरदारों के सामने दावत पेश की। आप सल्ल0 हज के महीनों में अरब के मुख़्तलिफ बड़े क़बीलों के सरदारों से मुलाकात करते। इसी तरह आप मक्का से गुज़रने वाले काफिलों से मुलाकात करते।

किसी कबीले का कोई व्यक्ति ईमान लाता तो उसे इस्लाम का आमंत्रक बना कर उसके कबीले भेजा जाता।

नऐ नऐ मैदानों की मुसलसल और कई बरसों की तलाश के नतीजे में मदीने का नया मैदान हासिल हुआ, जो पूरी दुनिया में इस्लाम के विस्तार के लिये मर्कज़ी प्लेटफार्म बना।

सीरत के इस पहलू में दुनिया के कोने कोने में फैले हुए कमज़ोर मुसलमानों के लिये कोशिश व मेहनत का बड़ा सबक़ है।

कमज़ोरों की ताक़त बनें

जब कोई गिरोह ज़ुल्म व सितम का निशाना बनता है तो उसमें से कमज़ोर लोग उसका ज़्यादा शिकार होते हैं। बाअसर और ताक़तवर लोग किसी हद तक अपनी हिफाज़त कर लेते हैं। मक्का में सबसे कमज़ोर और लाचार वर्ग ग़ुलामों और लौन्डियों का था। जब मुसलमानों पर ज़ुल्म के पहाड़ तोड़े जा रहे थे तो उसका सबसे ज़्यादा निशाना वह ग़ुलाम और लौन्डियां थे जिनके मालिक इस्लाम दुशमनी में हद से बढ़े हुए थे, लेकिन वह तमाम खतरों से बेपरवाह होकर बड़ी हिम्मत और हौसले के साथ इस्लाम में दाखिल हो गये थे। उनपर होने वाले ज़ुल्म की घटनायें पढ़कर रौंगटे खड़े हो जाते हैं और दिल खून के आँसू रोता है। हज़रत बिलाल हब्शी रज़ि0, हज़रत खब्बाब बिन अरत रज़ि0 और हज़रत यासिर रज़ि0 के ख़ानदान पर होने वाले ज़ुल्म व ज़्यादती की दास्तानें हम सब के इल्म में हैं। यह ज़ुल्म चन्द कौमों तक सीमित नहीं था, बल्कि अधिकतर लोग ज़ुल्म की चक्की में पीसे जा रहे थे।

ऐसे हालात में हैसियत वाले और बाअसर मुसलमानों ने आगे बढ़ कर उन्हें ज़ुल्म की चक्की से बाहर निकालने और सुरक्षा देने का प्रबन्ध किया। चुनाँचे हज़रत अबू बक्र सिद्दीक रज़ि0 ने ऐसे बहुत से मज़लूम और पीड़ित ग़ुलामों और लौन्डियों को

ख़रीद कर आज़ाद किया और अपनी हिफ़ाज़त में लिया।

ज़ुल्म से बचाने और हिफ़ाज़त देने के रायज तरीके हर ज़माने में मुखतलिफ हो सकते हैं। उस ज़माने में कबीलों से वाबस्ता लोग अपने कबीलों की मदद से सुरक्षित रहते थे, गुलाम को खरीदने और आज़ाद करने वाला एक तरह से उसका रक्षक़ माना जाता था। मौजूदा दौर में वह ज़्यादा सुरक्षित होता है जिसे क़ानूनी और सियासी हिमायत हासिल हो। ग़रीबों और कमज़ोरों को यह हिमायत आमतौर से हासिल नहीं हो पाती है। ऐसे में उन लोगों की ज़िम्मेदारी बढ़ जाती है जो ज़ुल्म का निशाना बनने वाले ग़रीबों के लिये सियासी और क़ानूनी हिमायत का इन्तेज़ाम कर सकें। अगर कोई अक़लियत (Minority) सामूहिक तौर पर सियासी समझ और पुख्तगी रखती है, उसे अपने क़ानूनी अधिकारों की समझ है, वह अपने हिफ़ाजत के नवीन तरीन क़ानूनी तरीकों से वाकिफ है तो उसे नुकसान पहुँचाना मुश्किल हो जाता है।

मज़लूमों (पीड़ितों) की मदद के लिये आगे बढ़ें

सीरते रसूल सल्ल0 का मक्की दौर कितना ज़बरदस्त था कि मुसलमान खुद ज़ुल्म का शिकार थे, इसके बावजूद आम पीड़ितों की मदद के लिये आगे–आगे रहते थे।

सीरतनिगार लिखते हैं कि कबीला अराश के एक आदमी की रक़म अबू जहेल ने दबा ली। वह मक्का के बाअसर लोगों से मिला, मगर किसी ने उसकी फरियाद नहीं सुनी। वह हरम में मौजूद कुरैश के कुछ सरदारों के पास गया, तो उन्होंने मज़ाक के तौर पर अल्लाह के रसूल सल्ल0 के पास भेज दिया। उसने आपके

सामने पूरा मामला रखा और मदद की दरख्वास्त की। आप उसके साथ अबू जेहल के घर गऐ और दरवाज़ा खटखटाया। उसने अन्दर से पूछा कौन? आप सल्ल0 ने कहाः मैं मोहम्मद हूँ, बाहर निकलो। वह बाहर निकला, उसका चेहरा पीला पड़ गया था। आप सल्ल0 ने कहा इस आदमी की रक़म अदा करो। उसने कहा बस अभी अदा करता हूँ, फौरन घर के अन्दर गया और उसकी रक़म लाकर दे दी।

अरब में लड़कियों को ज़िन्दा दफन कर दिया जाता था। आप सल्ल0 ने कुरान की वह आयतें लोगों का पढ़कर सुनाईं जिन में ऐसा करने वालों को सख्त सज़ा सुनाई गई थी।

ग़र्ज़ जुल्म की घटनायें हों या ज़ालिमाना तौर–तरीक़े हों, अल्लाह के रसूल सल्ल0 ने सब के खिलाफ आवाज़ उठाई और अमली कोशिशें भी कीं।

ख़ामोशी को अपनाऐं, प्रचार से बचें

मुखालफ़त और दुशमनी के माहौल में अगर कमज़ोर गिरोह ताक़तवर गिरोहों के सामने अपनी कोशिशों और उनके नताजों का एलान और प्रचार करने लगे तो यह काम हिम्मत और बहादुरी का नही, बल्कि सूझ बूझ की कमी करार पाएगा। अल्लाह के रसूल सल्ल0 ने जब मक्का में दीन की दावत की शुरूआत की तो इस बात का सख़्ती से ख़याल रखा कि काम तो ज़्यादा से ज़्यादा हो, लेकिन उसका एलान व प्रचार बिल्कुल न हो।

इस्लाम के बिल्कुल शुरूआत में एक दिन हज़रत अली ने देखा कि रसूल सल्ल0 और बीबी खदीजा रज़ि0 साथ नमाज़ पढ़ रहे हैं। उन्हें यह देख कर ताज्जुब हुआ और आप सल्ल0 से इसके

बारे में दरयाफ्त किया। आपने उन्हें इस्लाम के बारे में बताया। अगले दिन तक उन्हें इत्मिनान हासिल हो गया और वह ईमान ले आए। आपने उन्हें अपना ईमान छुपाये रखने की हिदायत की। इसी तरह बहुत से लोग इस्लाम लाते रहे और अपने करीबी लोगों में इस्लाम की दावत भी देते रहे, मगर कोशिश यही रही कि इस्लाम लाने की चर्चा न हो। शुरू में तो खामोशी का इतना ख्याल किया गया कि नऐ इस्लाम लाने वालों को भी एक दूसरे के बारे में इल्म नहीं होता था। चुनाँचे मुख़्तलिफ लोग यह समझते रहे कि तीसरे और चौथे नम्बर पर उन्हें इस्लाम की दौलत हासिल हुई।

हज़रत अबू ज़र गिफारी को अल्लाह के रसूल सल्ल0 ने हिदायत की ''मक्का में किसी को अपने इस्लाम के बारे में न बताओ मुझे डर है कि वह तुम्हें क़त्ल कर देगें।

जब मदीने में इस्लामी हुकूमत क़ायम हो गई तब भी मक्का और दूसरे कबीलों में ईमान लाने वाले मुसलमानों की नीति यही थी कि वह अपने ईमान की चर्चा न करें, बल्कि खामोशी के साथ दीन का काम करते रहें।

टकराओ से बचें

अल्लाह की तरफ से मुसलमानों को सख्ती से नसीहत की गई कि शिर्क में मुब्तला लोगों और उनके माबूदों को गाली न दी जाए। इस बात की भी सख्ती से हिदायत थी कि दीन की दावत तो दें लेकिन बहस व मुबाहसे से दूर रहें। लम्बे समय तक अल्लाह के रसूल सल्ल0 ने इसका भी एहतमाम किया था कि बा जमात नमाज़ें ख़ाना–ए–काबा के पास जाकर अदा करने के बजाए गुमनाम जगहों पर अदा करें। इन तमाम एहतियातों की वजह बुज़दिली

नहीं थी, बल्कि इसका सबब आप सल्ल0 की यह ख़्वाहिश थी कि टकराओ की नौबत न आने पाए। टकराओ की हालत दावत के लिये माहौल को साज़गार नहीं रहने देती है।

इस्लामी दावत की खुसूसियत यह है कि मदऊ क़ौम (जिसको दावत दी जा रही है) के साथ दाओ (दावत देने वाले) का रवैया सब्र व बरदाश्त और नर्मी व भाईचारा का होता है, वह दावत के मामले में निहायत गम्भीर रहता है। वह दूसरों के साथ टकराओ से बचने की कोशिश करता है और उन तक अपनी दावत पहुँचाने के लिये हर वक्त लगा रहता है। हाँ जहाँ ज़्यादती बहुत बढ़ जाऐ और बचने का कोई चारा न रहे तो कभी सख्त जवाब देना भी ज़रूरी हो जाता है। मक्का में पेश आने वाले एक वाकिया से उसे समझा जा सकता है। पहले सीरत निगार इब्न इसहाक लिखते हैं– ''अल्लाह के रसूल सल्ल0 के सहाबा को जब नमाज़ अदा करनी होती तो घाटियों की तरफ निकल जाते और लोगों से छिपकर वहाँ नमाज़ अदा करते। एक बार हज़रत साद बिन अबी वक़ास रज़ि0 अपने साथियों के साथ एक घाटी में जाकर नमाज़ पढ़ रहे थे कि मुश्रिकीन की एक टोली वहाँ अर गई। वह लोग मुसलमानों को देख कर बुरा भला कहने और गाली गलौज करने लगे, फिर हाथापाई की नौबत आ गई जब उनकी बदतमीज़ी हद से बढ़ गई तो हज़रत साद रजि0 ने ऊँट की एक हड्डी उठाई और उनमें से एक के सर पर दे मारी। उसकी हालत देख कर सब भाग खड़े हुए।''

माहौल को पुरअमन बनाए रखें

जब मक्का में इस्लाम दुशमनों की शरारतें और ज़्यादतियाँ बहुत बढ़ गईं तो हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ रज़ि0 और उनके साथी नबी सल्ल0 के पास आए और अर्ज़ किया– ''अल्लाह के नबी! जब हम मुशरिक थे तो ज़बरदस्त और ताक़तवर थे, लेकिन जब हम ईमान ले आए तो दबाए जा रहे हैं और बेइज़्ज़त किये जा रहे हैं। प्यारे नबी सल्ल0 ने फ़रमाया– ''मुझे नज़र अन्दाज़ करने का हुक्म दिया गया है, इसलिये उन लोगों से जंग न करो।'' मक्का के लोगों का जुल्म मुसलमानों पर हद से ज़्यादा बढ़ा हुआ था। मुसलमानों में बाज़ लोग बहुत ताकतवर थे, लेकिन फिर भी उन्हें हथियार उठाने से मना किया गया। सवाल पैदा होता है कि आखिर मक्का में जंग से रोकने की हिकमत क्या थी? इस मुमानियत की बहुत सी हिकमतें बताई गई हैं और वह सब मुनासिब और कारामद हैं। इनमें से एक हिकमत यह है कि वह शहर जिसे दावत का मैदान बनना चाहिये, उसे गृहयुद्ध का मैदान नहीं बनना चाहिये।

इसमें कोई शक नहीं कि गृहयुद्ध (सिविल वार) के नतीजे निहायत बुरे होते हैं। उसका नुकसान तमाम शहरियों को उठाना पड़ता है। जब कोई बस्ती गृहयुद्ध के दलदल में फंस जाती है तो सालों तक उससे बाहर नहीं निकल पाती। गृहयुद्ध की स्थिति में तमाम तामीरी और बनाव के काम रुक जाते हैं और दावती काम ठप पड़ जाता है।

कमज़ोरों का स्वागत करें, बाअसर लोगों को तलाश करें

ग़ैर इस्लामी समाज आमतौर से समाजी जुल्म में मुब्तला होते हैं उसके मुकाबले में इस्लामी समाज समाजी जुल्म से पाक

होता है इस बिना पर कमज़ोरो और मज़लूमों के लिये बड़ी कशिश रखता है। ऐसे लोगों के लिये मुस्लिम समाज का दरवाज़ा खुला रहना चाहिये, उनका खुले दिल से स्वागत होना चाहिये और उन्हें इज़्ज़त व सम्मान के साथ रहने का मौक़ा देना चाहिये। अल्लाह के रसूल सल्ल0 ने जब मक्का में दावत का आग़ाज़ किया तो वहाँ के पीड़ित और मज़लूम ग़ुलामों और लौन्डियों ने आगे बढ़ कर उस दावत को क़ुबूल किया। अल्लाह के रसूल सल्ल0 और आप के साथियों ने उन्हें ख़रीद कर आज़ाद किया और उन्हें समाज में ऊँचा मुक़ाम दिया।

दूसरी तरफ अल्लाह के रसूल सल्ल0 की दावत का ख़ास फोकस क़ुरैश और अरब क़बीलों के सरदारों की तरफ था। आप क़ुरैश के सरदारों से मिलते और रास्ता रोक रोक कर उन्हें दावत देते। हज के महीनों में आप मुख़तलिफ क़बीलों के सरदारों से मिलते और उनके सामने इस्लाम का पैग़ाम पेश करते।

समाज में मौजूद ताक़तवर और बाअसर लोगों तक पहुँचना और उन तक इस्लाम की दावत पहुँचाना सीरत का अहम सबक़ है। इसका फायदा यह होता है कि इस्लाम का रास्ता उनके सामने रोशन हो जाता है। इस्लाम का सही परिचय उन तक पहुँचता है। मुख़ालिफ़ परोपेगन्डे का ज़ोर टूटता है, नफरत कम होती है और दिल नर्म होते हैं।

हब्शा के बादशाह नज्जाशी के सामने मुसलमानों ने इस्लाम का बेहतरीन परिचय पेश किया। नज्जाशी उस वक़्त मुसलमान नहीं हुआ, लेकिन उसके दिल में इस्लाम की क़द्र और मुसलमानों से हमदर्दी फौरन पैदा हो गई। क़ुरैश के प्रतिनिधि मंडल ने नज्जाशी के सामने इस्लाम और मुसलमानों की जो ग़लत

तसवीर पेश की, हज़रत जाफ़र रज़ि0 की तक़रीर ने उसके बुरे असरात को दूर कर दिया और पूरे दरबार के सामने इस्लाम की सही और ख़ूबसूरत तसवीर पेश कर दी।

किसी को स्थायी दुशमन न समझें

मक्का के फ़ितना व फ़साद के हालात में जबकि इस्लाम के दुश्मनों की दुश्मनी हद से बढ़ी हुई थी, अल्लाह के रसूल सल्ल0 ने अपने आप को किसी का दुशमन करार नहीं दिया। आपने किसी से सम्बन्ध तोड़ने का एलान नहीं किया और किसी के लिये गुफ्तुगु का दरवाज़ा बन्द नहीं किया। सख़्त से सख़्त दुशमन से आप मिलते, उनके सामने अपना पैग़ाम रखते और उनके सवालों का जवाब देते।

उमैर बिन वहब इस्लाम का सख्त दुशमन था। जब तक अल्लाह के रसूल सल्ल0 मक्का में रहे, वह आपको सताने में आगे आगे रहा। जब आप मदीना आए तब भी वह दुश्मनी की आग में जलता रहा। जंगे बद्र में बेटे के साथ शामिल हुआ। बेटा कैद हो गया तो उसे छुड़ाने के लिये फ़िदये की रक़म ले कर मदीना पहुँचा। साथ ही अल्लाह के रसूल सल्ल0 को क़त्ल करने के इरादे से ज़हर में बुझी हुई तलवार भी साथ लाया। अल्लाह के रसूल सल्ल0 ने उसका खुले दिल से स्वागत किया, उसे पास बैठाया और उसे बताया कि अल्लाह ने उसके इरादे की खबर पहले ही दे दी है। साज़िश का इल्म हो जाने के बावजूद आपके अख़लाक से प्रभावित होकर आखिरकार उमैर बिन वहब रज़ि0 के दिल की काया पलट हो गई और वह सच्चे दिल से इस्लाम ले आए। हज़रत उमैर बिन वहब रज़ि0 ने इस्लाम लाने के बाद अल्लाह के रसूल सल्ल0 से अर्ज़ किया कि मैं अब तक अल्लाह के नूर को

बुझाने में लगा था, अल्लाह के दीन पर चलने वालों को सख्त तकलीफ़ देता था, अब मेरी ख़्वाहिश है कि आप मुझे मक्का लौटने की इजाज़त दें, मैं उन्हें अल्लाह उसके रसूल और इस्लाम की तरफ दावत दूँ, हो सकता है अल्लाह उन्हें हिदायत दे।'' अल्लाह के रसूल सल्ल0 ने उन्हें इजाज़त दे दी। रिवायत करने वाले कहते हैं कि आप सल्ल0 ने सहाबा से कहा– ''अपने भाई को दीन सिखाओ, उन्हें क़ुरान की तालीम दो और उनके क़ैदी को आज़ाद कर दो।'' वह मक्का लौटे और वहाँ रह कर इस्लाम की दावत देने लगे, उनके ज़रिये बहुत से लोगों को हिदायत मिली।

वह कितने बड़े दुश्मने इस्लाम थे और फिर इस्लाम में उन्हें क्या मुक़ाम हासिल हुआ, इसका अन्दाज़ा हज़रत उमर रजि0 के उस जुमले से करें कि ''अल्लाह की क़सम जब उमैर हमारे यहाँ आया था तो सुअर उससे ज़्यादा महबूब था, लेकिन आज वही उमैर मुझे अपने बच्चों से ज़्यादा महबूब है।''

इस्लाम किसी इन्सान को स्थायी दुशमन क़रार नहीं देता। सीरते रसूल सल्ल0 का बड़ा अहम सबक़ यह है कि मुसलमान किसी को स्थायी दुशमन न समझें। कुरान मजीद की तालीम यह है कि सख्त से सख्त दुशमन के अन्दर दोस्त बनने की कुछ न कुछ सम्भावना बहेरहाल रहती है। इस सम्भावना को नज़र अन्दाज़ करना समझदारी नहीं हो सकती। इस सम्भावना को हकीकत का रूप प्रदान करने में सबसे अहम रोल मुसलमानों के अपने रवैये का है। सीरते रसूल सल्ल0 में हमें इसी पाज़िटिव रवैये की तालीम मिलती है।

हालात बदलने की कोशिश करें

अल्लाह के रसूल सल्ल0 ने मक्का में दावत की रफ़्तार को बहुत तेज़ रखा। अपनी ज़िन्दगी का एक एक लम्हा इस राह में लगा दिया। सख़्त बुख़ार की हालत में भी कारे दावत के काम को छोड़ कर आराम करना गवारा नहीं किया। आपके सहाबा रज़ि0 ने भी दावत के काम को तेज़ रफ्तारी के साथ अन्जाम दिया। यहाँ तक कि जो औरतें हिदायत पा लेतीं वह भी ख़ामोशी के साथ इस दीन को दूसरी औरतों तक पहुँचाने में सक्रिय हो जातीं। दस साल की मामूली अवधि में मक्का के हर घर में और अरब के हर बड़े क़बीले में यह दावत पहूँच चुकी थी।

अगर मुसलमान कहीं कमज़ोर हैं तो उनकी ज़िम्मेदारी है कि वह अपनी हालत को बदलने की तेज़ रफ्तार कोशिशें करें। अपनी कमज़ोर हालत पर मुत्मइन रहना किसी और गिरोह के लिये नुक़सानदेह हो या न हो मगर मुसलमानों के लिये शदीद नुक़सान का सबब बनता है। अहले इस्लाम के लिये कमज़ोरी की हालत में रहना उनके मज़हबी और तहज़ीबी पहचान के लिये खतरनाक होता है। मक्का की तेरह साला तारीख़ यह बताती है कि मुस्लिम गिरोह कमज़ोरी की हालत पर मुत्मईन नहीं रहता। वह लगातार आगे बढ़ने की कोशिश करता रहता है। मुख़ालिफ़ कूव्वतों के बिछाए हुए काँटे उसके क़दमों को लहू लहान कर देते हैं, लेकिन उसकी रफ़्तार को सुस्त नहीं होने देते हैं।

मक्का की तेरह साला तारीख में हमें कहीं पसपाई नज़र नहीं आती, कहीं सुस्ती दिखाई नहीं देती, कहीं बुज़दिली या

मायूसी का नाम व निशान नहीं मिलता। मक्का की तेरह साला तारीख दिलों को हौसला देने और राहों को रोशन करने वाली तारीख है। मक्की दौर अपने मोक़िफ़ पर मज़बूती से जमे रहने और अपने फ़रीज़े को इख़लास और कड़ाई से अदा करने का इम्तेहान था। जो लोग मक्का के इम्तेहान में कामयाब होते हैं वही मदीने के अहेल क़रार पाते हैं और जो मदीने के इम्तेहान में कामयाब होते हैं, मक्के के दरवाज़े उनके लिये खोल दिये जाते हैं।